

संपादकीय

तीसरी भाषा : जड़ों से जुड़ने का उत्सव

हाईकोर्ट ने जब कहा कि 10वीं में भी 7वीं, 8वीं और 9वीं की तरह तीसरी भाषा से छूट मिलेगी, तो सिर्फ एक कानूनी पंक्ति नहीं लिखी गई, बल्कि लाखों बच्चों के चेहरे पर मुस्कान लौट आई। वह बच्चा, जो पहले से दो गैर-मातृ भाषाओं का बोझ ढो रहा था, अब अपनी मौजूदा भाषा में ही अपनी पहचान बनाए रख सकेगा। कोर्ट ने साफ कहा कि किसी भी छात्र को उसकी इच्छा के विरुद्ध तीसरी भाषा पढ़ने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा। यह फैसला बस्ता हल्का करने का नहीं, बल्कि मन हल्का करने का फैसला है।

भाषा किताब का पन्ना नहीं, दादी की लोरी है। हम भूल जाते हैं कि भाषा सिर्फ अंक लाने का विषय नहीं है। भाषा वह लोरी है जो दादी रात में सुनाती है, वह गीत है जो खेत में किसान गाता है, वह बोली है जिसमें मां पुकारती है। अब हम बच्चे पर तीसरी भाषा का अनावश्यक बोझ डालते हैं तो हम उसे उसकी अपनी लोरी से दूर कर देते हैं। कोर्ट का यह कहना कि छात्र अपनी मौजूदा भाषा का सम्मान जारी रख सकेगे, इसी भावनात्मक जुड़ाव की जीत है। यह सम्मान सिर्फ भाषा का नहीं, बल्कि उस संस्कृति का है जो उस भाषा में बसती है। विलुप्त होती आवाजें हमें पुकार रही हैं। आज हमारे देश में 195 से ज्यादा क्षेत्रीय बोलियां विलुप्त होने की कगार पर हैं। बुंदेलखंडी, बघेलखंडी, गोंडी, भीली, कोरकू, निमाड़ी और मालवी जैसी मीठी बोलियां धीरे-धीरे स्कूलों की किताबों से गायब हो रही हैं। क्या कभी सोचा है कि जब ये बोलियां मर जाएंगी तो उनके साथ कितनी कहानियां, कितने लोकगीत और कितनी कहावतें मर जाएंगी? नई शिक्षा नीति में मातृभाषा में पढ़ाई की बात तो कही गई, लेकिन जमीनी सच यह है कि 28,813 सीबीएसई स्कूलों में से करीब 99 प्रतिशत के पास आज भी नई व्यवस्था लागू करने की पूरी तैयारी नहीं है। ऐसे में तीसरी भाषा की जिद करना अपनी ही जड़ों को काटने जैसा है। राहत के साथ जिम्मेदारी भी आई है।

यह फैसला सिर्फ राहत नहीं, एक बड़ी जिम्मेदारी भी है। केंद्र ने मौजूदा छूटों को खत्म करने के लिए अधिसूचना जारी की थी और कहा था कि स्कूल तैयार हैं, लेकिन कोर्ट में दाखिल हलफनामे और जमीनी हकीकत में जमीन-आसमान का अंतर है। अभी भी करीब 12 प्रतिशत स्कूलों में संसाधन पूरे होने बाकी हैं। ऐसे में अगर हम तीसरी भाषा थोपेंगे तो क्या पढ़ाएंगे, कौन पढ़ाएगा और बच्चा क्या सीखेगा? इसलिए कोर्ट की नजर अब स्कूलों की तैयारी पर भी है और यह नजर बहुत जरूरी है।

भारत की आत्मा उसकी भाषाओं में बसती है। हिंदी और अंग्रेजी जरूरी हैं, लेकिन बुंदेलखंड का बच्चा अगर बुंदेलखंडी नहीं जानेगा तो वह अपने ही खेत की मिट्टी से कैसे जुड़ेगा? आदिवासी बच्चा अगर गोंडी नहीं पढ़ेगा तो वह अपने पुरखों के ज्ञान को कैसे आगे ले जाएगा? यह फैसला हमें अपसर देता है कि हम तीन भाषा फार्मूले को बोझ न बनाकर सेतु बनाएं, अपनी मातृभाषा और देश को अन्य भाषाओं के बीच, अपनी बोली और किताबी भाषा के बीच। अब समय है कि सरकार और समाज दोनों मिलकर क्षेत्रीय भाषाओं को बचाने का संकल्प लें। हर स्कूल में साल में एक दिन अपनी बोली का दिन हो। हर बच्चे को अपनी क्षेत्रीय भाषा में एक कविता या कहानी लिखने के लिए कहा जाए। स्थानीय लेखकों और बुजुर्गों को स्कूलों में बुलाया जाए, ताकि भाषा किताब से निकलकर जीवंत में आए। जब बच्चा अपनी भाषा पर गर्व करेगा तो वह किसी भी भाषा को बोझ नहीं समझेगा, बल्कि खुशी से सीखेगा।

कोर्ट ने बस्ते से एक किताब कम की है, लेकिन दिल में अपनी भाषा के लिए एक जगह बढ़ा दी है। यह छूट नहीं है, अपनी जड़ों की ओर लौटने का यत्नीत है। तीसरी भाषा से राहत का यह फैसला अगर हमें हमारी विलुप्त होती भाषाओं को बचाने की ओर ले जाता है तो यही सच्ची शिक्षा होगी। भाषा बचेगी तो संस्कृति बचेगी, संस्कृति बचेगी तो भारत बचेगा।

आजकल

क्रूड और महंगाई के जाल में फंसा बाजार

दुनिया में कच्चे तेल की कीमतें तेज होने और महंगाई बढ़ने की आशंका ने भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए फिलहाल अच्छे संकेत नहीं दिए हैं। पश्चिम एशिया संकट से राहत नहीं मिलने, तेल की कीमतें बढ़ने और विदेशी निवेशकों की हिकवाली जैसे तीन बड़े कारणों से शेयर बाजार में बड़ी गिरावट आई है। सोमवार को सेंसेक्स 1,124 अंक गिरकर 72,771 अंक पर बंद हुआ, जो पिछले छह माह का सबसे निचला स्तर है। वैश्विक बाजार में तेल के दाम 109 डॉलर प्रति बैरल तक पहुंच गए हैं और गिरावट का सिलसिला थमने का नाम नहीं ले रहा है।

पिछले एक माह में भारतीय बाजार करीब 6 प्रतिशत गिर चुका है। कंपनियों की बाजार पूंजी में करीब 25 लाख करोड़ रुपये की कमी आई है। इस गिरावट से युवा निवेशकों की प्रभावित हो रहे हैं। बाजार के निवेशकों में 30 साल से कम उम्र के लोगों की संख्या करीब 37.9 प्रतिशत है, जबकि म्यूचुअल फंड में इस आयु वर्ग की हिस्सेदारी 44 प्रतिशत है। 128 अगस्त को सेंसेक्स 77,265 पर था, जो 28 सितंबर को 72,772 पर आ गया। इसी दौरान ब्रेंट क्रूड 88.10 डॉलर से बढ़कर 109.02 डॉलर प्रति बैरल हो गया।तेल के साथ बॉन्ड यील्ड बढ़ना, व्याज दरें बढ़ने की आशंका और विदेशी बिकवाली ने बाजार को चारों तरफ से घेर लिया है। यदि व्याज दरें बढ़ती हैं तो कर्ज महंगा होगा और ईएमपीआई बढ़ेगा। महंगाई को रोकने के लिए उठाया गया कदम लोगों की जेब पर भारी पड़ सकता है। मुख्य आर्थिक सलाहकार अनंत नागेश्वरन ने भी निकट भविष्य की चुनौतियों में अस्थिर वैश्विक संबंध, ऊर्जा बाजार का संकट और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की भीम प्रगति को रेखांकित किया है।

नालंदा की ऐतिहासिक भूमि पर विश्वरंग : ज्ञान, भाषा, साहित्य, कला और एशिया के साथ संवाद

संतोष घोषे
भारत को समझने के लिए केवल उसका राजनीतिक इतिहास पढ़ना पर्याप्त नहीं है। भारत का एक दूसरा इतिहास भी है, विश्वविद्यालयों, गुरुकुलों, पुस्तकालयों, यात्राओं, भाषाओं, लोक-स्मृतियों, कलाओं और उन सांस्कृतिक संपर्कों का इतिहास, जिनके माध्यम से एक भूगोल दूसरे भूगोल से जुड़ता रहा। यह विचारों की आवाजोंही और ज्ञान के आदान-प्रदान का इतिहास है। नालंदा इसी परंपरा का महत्वपूर्ण स्थल है, जहां भारतीय बौद्धिक और सांस्कृतिक चेतना का व्यापक एशियाई आयाम दिखाई देता है। इसीलिए नालंदा की भूमि पर ‘विश्वरंग’ का आयोजन केवल किसी सांस्कृतिक कार्यक्रम का विस्तार नहीं है। यहां स्थान स्वयं विचार का हिस्सा बन जाता है। एक ओर नालंदा की ऐतिहासिक स्मृति है, जहां दूर-दूर से विशारथी और विद्वान अध्ययन और विमर्श के लिए आते थे, दूसरी ओर विश्वरंग की समकालीन दृष्टि है, जो विभिन्न भाषाओं, साहित्यिक परंपराओं और सांस्कृतिक क्षेत्रों के रचनाकारों, कलाकारों और शिक्षाविदों को संवाद के लिए एक मंच पर लाती है। यह इतिहास की पुनरवृत्ति नहीं, सांस्कृतिक आत्मबोध का भी है।

पिछले कुछ महीनों से देश की राजनीति में एक नया शोर गूंज रहा है, वोट चोरी का आरोप। यह शोर बेंगलुरु के महादेवपुरा विधानसभा क्षेत्र से शुरू हुआ और दिल्ली की यमुना पार की कॉलोनियों तक पहुंच गया। एक तरफ आरोप लगाया जा रहा है कि मतदाता सूची में हेरफेर किया गया है, तो दूसरी तरफ यह दावा किया जा रहा है कि एक ही घर में 80 वोट जोड़ दिए गए हैं। यह मामला सिर्फ एक विधानसभा का नहीं, बल्कि पूरे चुनावी सिस्टम पर सवाल खड़ा करने वाला बन गया है।

इस पूरे घटनाक्रम के केंद्र में कांग्रेस नेता राहुल गांधी हैं। उन्होंने पहले बेंगलुरु की घटना का उल्लेख किया और कहा कि वहां वोट चोरी हुई है। बाद में दिल्ली की एक कॉलोनी के 728 लोगों का जिक्र करते हुए कहा कि वे लोग उसी मकान में समय-समय पर रहते हैं, लेकिन उनका वोट कटवा दिया गया है। उनका कहना है कि यह सिर्फ वोट कटवाने का मामला नहीं, बल्कि गहन पुनरीक्षण के नाम पर चुनिंदा लोगों को निशाना बनाने की साजिश है। उनका आरोप है कि यमुना पार के यमुना डूब क्षेत्र में रहने वाले लोगों की झुगियां तोड़ी गईं और फिर उनके वोट भी काट दिए गए, ताकि वे चुनाव में हिस्सा ही न ले सकें।

इस कहानी में एक और मोड़ तब आया, जब एक एसडीएम को फोन लगाया गया। वहां के अधिकारियों ने बताया कि वहां कोई घर या झुग्गी नहीं है तो वोट कैसे रहेगा? इस बयान को आधार बनाकर यह कहा गया कि प्रशासन खुद मान रहा है कि वहां लोग नहीं रहते, जबकि दावा है कि वहां सालों से लोग रह रहे हैं और वोट डालते आ रहे हैं। 2024 के लोकसभा चुनाव में भी उन लोगों ने वोट डाला था। अब सवाल यह है कि अगर पिछले चुनाव तक वोट था तो इस साल अचानक गायब कैसे हो गया? क्या यह मानवीय भूल है या सोची-समझी रणनीति है? वोटर लिस्ट का गहन



पुनरीक्षण एक सामान्य प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि कोई भी अवैध मतदाता सूची में न रहे और कोई भी वैध मतदाता छूट न जाए। निर्वाचन आयोग की आधिकारिक प्रक्रिया के अनुसार पुनरीक्षण के दौरान दावे और आपत्तियां आमंत्रित की जाती हैं तथा राजनीतिक दलों को भी संबंधित सूचियां उपलब्ध कराई जाती हैं। लेकिन जब इस प्रक्रिया का इस्तेमाल चुनिंदा इलाकों में चुनिंदा लोगों के वोट काटने के लिए किए जाने का आरोप लगे तो यह लोकतंत्र के लिए गंभीर सवाल बन जाता है। यमुना पार की घटना में आरोप है कि जिन लोगों के पास पहले से पहचान पत्र हैं, उनके वोट भी काट दिए गए हैं और जब वे इसकी शिकायत लेकर जाते हैं तो उन्हें

धमकाया जाता है कि उनका नाम और पद लिखकर भेजो, मैं दूसरे तरीके से जवाब दूंगा। यह भाषा किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए ठीक नहीं है।

इस पूरे मामले ने भाजपा और कांग्रेस के बीच एक नया मोर्चा खोल दिया है। कांग्रेस का कहना है कि इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों पर अपनी मुहर लगाने के बाद अब वोटर लिस्टों पर भी कब्जा करने की कोशिश हो रही है, जबकि सत्ता पक्ष का कहना है कि यह सिर्फ हार का बहाना है और जब से राहुल गांधी और अखिलेश यादव जैसे नेताओं ने ईवीएम पर सवाल उठाए हैं, तब से वे हर हार के बाद नया बहाना ढूंढते हैं। सच्चाई क्या है, यह तो जांच के बाद ही पता चलेगा, लेकिन इतना तय है कि वोटर लिस्ट का

फर्जी राजनीतिक दलों की चंदा मंडी और लुटता भरोसा

देश में राजनीतिक दल बनाना जितना आसान है, उतना ही आसान हो गया है उस दल की आड़ में काले धन को सफेद करना। गुजरात में सामने आए ताजा मामले ने इस कड़वी सच्चाई को फिर से उजागर कर दिया है, जहां तीन गैर-मान्यता प्राप्त पंजीकृत दलों पर लगभग 1,870 करोड़ रुपये के फर्जी चंदे के जरिए सरकारी खजाने को 560 करोड़ रुपये से ज्यादा का नुकसान पहुंचाने का आरोप लगा है। यह कोई छोटी-मोटी हेराफेरी नहीं, बल्कि एक सोची-समझी साजिश है, जिसमें दान की रसीदें बेची गईं और बदले में नकद पैसा लौटया गया। इस पूरे खेल में न तो कोई विचारधारा है, न कोई कार्यकता, न कोई जनसेवा, बल्कि सिर्फ कमीशन का गणित है।

इस धंधे को समझना बहुत जरूरी है। आयकर कानून में राजनीतिक दलों को दिए गए दान पर 100 प्रतिशत छूट का प्रावधान है। यह प्रावधान इसलिए बनाया गया था ताकि आम नागरिक और व्यापारी साफ-सुथरी राजनीति को मदद कर सकें, लेकिन कुछ चालाक लोगों ने इसे कमाई का जरिया बना लिया।

खेल ऐसा है कि व्यापारी चेक या आरटीजीएस से फर्जी दल को दान देता है, दल उसे दान की रसीद दे देता है, व्यापारी उस रसीद के आधार पर आयकर में छूट ले लेता है और कुछ दिन बाद वही पैसा शेल कंपनियों के जरिए घुमाकर नकद में वापस कर दिया जाता है। इसमें से दल दो से दस प्रतिशत तक अपना कमीशन रख लेता है। दोनों पक्ष खुश, व्यापारी का टैक्स बच गया और दल की जेब भर गई। नुकसान सिर्फ दल के खजाने का हुआ।

2,800 दलों की भीड़ में असली-नकली की पहचान कौन करे? आज देश में 2,800 से ज्यादा रजिस्टर्ड गैर-मान्यता प्राप्त दल हैं। इनमें से अधिकांश दल सिर्फ चुनाव आयोग के रिकॉर्ड में जिंदा हैं, जमीन पर उनका कोई अस्तित्व नहीं है। ये दल न कभी रैली करते हैं, न कभी जनसंपर्क करते हैं, लेकिन हर साल अपनी ऑडिट रिपोर्ट में करोड़ों का चंदा दिखा देते हैं। सवाल उठता है कि जब ये दल चुनाव ही नहीं लड़ते या लड़ते भी हैं तो इनके उम्मीदवारों की जमानत जब्त हो जाती है, तो फिर इन्हें इतना चंदा कौन दे रहा है? इसका जवाब ही इस फर्जीवाड़े में छिपा है। चुनाव आयोग के पास इन दलों



खेल ऐसा है कि व्यापारी चेक या आरटीजीएस से फर्जी दल को दान देता है, दल उसे दान की रसीद दे देता है, व्यापारी उस रसीद के आधार पर आयकर में छूट ले लेता है और कुछ दिन बाद वही पैसा शेल कंपनियों के जरिए घुमाकर नकद में वापस कर दिया जाता है। इसमें से दल दो से दस प्रतिशत तक अपना कमीशन रख लेता है। दोनों पक्ष खुश, व्यापारी का टैक्स बच गया और दल की जेब भर गई। नुकसान सिर्फ देश के खजाने का हुआ।

की मान्यता रद्द करने का अधिकार तो है, लेकिन प्रक्रिया इतनी धीमी है कि जब तक कार्रवाई होती है, तब तक वे कई सौ करोड़ का खेल कर चुके होते हैं। हम इसे सिर्फ टैक्स चोरी समझकर भूल नहीं सकते। यह लोकतंत्र की आत्मा पर हमला है। राजनीतिक दल लोकतंत्र के मंदिर हैं। लोग उन पर भरोसा करते हैं कि वे देश को दिशा देंगे, लेकिन जब वही दल जाली नोटों की तरह फर्जी रसीदें छापने लगें तो आम आदमी का भरोसा टूट जाता है। यह भरोसा

ही लोकतंत्र की सबसे बड़ी पूंजी है। 1,870 करोड़ रुपये का फर्जी चंदा मतलब यह है कि इतना काला धन सिस्टम में सफेद बनकर घूम रहा था और किसी को भनक तक नहीं लगी। अगर गुजरात पुलिस और आयकर विभाग ने मिलकर जांच न की होती तो यह पैसा आज भी घूम रहा होता। पंजीकरण की आसान प्रक्रिया में चूक है। सिर्फ सौ लोगों के हस्ताक्षर और कुछ कागजात देकर कोई भी दल बना लेता है। उसके बाद कोई निगरानी नहीं



मुद्दा अब राष्ट्रीय मुद्दा बन गया है। आम मतदाता इस पूरे शोर में खुद को ठगा-सा महसूस कर रहा है। वह सोचता है कि अगर उसका वोट ही सुरक्षित नहीं है तो फिर लोकतंत्र का मतलब क्या है? कई जगहों पर लोगों ने कहा कि वे सालों से एक ही जगह रह रहे हैं, लेकिन उनका नाम सूची से गायब कर दिया गया है। कुछ लोगों ने यह भी कहा कि उनके घर का नंबर शून्य लिखा था और वोट लिस्ट में उस घर में 80 वोट पाए गए थे। यह सुनकर आम आदमी के मन में डर पैदा होता है कि क्या उसका वोट भी चोरी हो जाएगा? इस पूरे विवाद में सबसे अहम भूमिका चुनाव आयोग की है। चुनाव और चुनाव प्रक्रिया के संचालन के साथ

मतदाता सूची से जुड़ी व्यवस्थाओं की जिम्मेदारी भी उसी की है। चुनाव हारने या राजनीतिक नुकसान के बाद मतदाता सूची और चुनाव प्रक्रिया पर सवाल उठना कोई नई बात नहीं है, लेकिन गंभीर आरोपों की विश्वसनीयता केवल आरोप लगाने से नहीं, ठोस प्रमाणों से तय होती है। इसलिए किसी भी राजनीतिक दल या नेता को यदि मतदाता सूची में गड़बड़ी का दावा है तो उसे प्रमाणों के साथ सामने रखना चाहिए। दूसरी ओर, चुनाव आयोग को भी अपनी प्रक्रिया में पूरी पारदर्शिता बनाए रखते हुए जहां शिकायत हो, वहां निष्पक्ष जांच और तथ्यों को सार्वजनिक करने से पीछे नहीं हटना चाहिए। सरकार और चुनावी तंत्र को राजनीतिक दबाव से अप्रभावित रहते हुए अपनी संवैधानिक जिम्मेदारियां ईमानदारी और दृढ़ता से निभाते रहना चाहिए। लोकतंत्र में संस्थाओं की विश्वसनीयता किसी एक चुनाव या किसी एक दल से बड़ी होती है, इसलिए उसे बनाए रखना सभी की साझा जिम्मेदारी है।

वोट चोरी का आरोप लगाना आसान है, लेकिन उसे साबित करना जरूरी है। राहुल गांधी को यह भी बताना होगा कि उनके पास जो सबूत हैं, वे कितने पुख्ता हैं और सरकार को भी यह बताना होगा कि उसने वोटर लिस्ट के पुनरीक्षण में क्या कदम उठाए हैं। लोकतंत्र तभी मजबूत होगा, जब हर वोट की कीमत समझी जाएगी और हर मतदाता को यह भरोसा होगा कि उसका वोट सुरक्षित है। अगर यह भरोसा टूट गया तो फिर चुनाव का कोई मतलब नहीं रह जाएगा। इसलिए राजनीतिक आरोपों और हथ्यों वाली प्रक्रिया से होना चाहिए और सभी संबंधित संस्थाओं को अपनी जिम्मेदारी पूरी निष्पक्षता से निभानी चाहिए। चुनाव आयोग की निष्पक्षता और मतदाता के भरोसे की रक्षा किसी भी राजनीतिक विवाद से ऊपर है। यही लोकतंत्र की असली कसौटी है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

कि वह दल कर क्या रहा है। निगरानी की कमी में है। आयकर विभाग के पास इतना स्टॉफ नहीं है कि वह हर दल की ऑडिट रिपोर्ट की गहराई से जांच कर सके। चूक कानून में है। राजनीतिक दलों को मिलने वाली छूट पर कोई ऊपरी सीमा नहीं है। कोई भी व्यक्ति कितनी भी राशि दान में दिखाकर छूट ले सकता है। इसी का फायदा उठाया जाता है। जब तक इन तीनों खामियों को दूर नहीं किया जाएगा, तब तक हर साल कोई न कोई नया फर्जी दल सामने आता रहेगा।

समाधान के लिए कड़े और व्यावहारिक कदम उठाने होंगे। सबसे पहले, जो दल लगातार तीन चुनावों में एक भी सीट पर चुनाव नहीं लड़ता या जिसके सभी उम्मीदवारों की जमानत जब्त हो जाती है, उसकी मान्यता स्वतः रद्द हो जानी चाहिए। 20 हजार रुपये से अधिक के किसी भी राजनीतिक चंदे को सिर्फ डिजिटल माध्यम से ही स्वीकार किया जाए और उसका मिलान आयकर रिटर्न से किया जाए। यह होना चाहिए कि चुनाव आयोग और आयकर विभाग का एक संयुक्त पोर्टल बने, जहां हर दल को हर चंदे की जानकारी तुरंत अपलोड करनी पड़े। चौथा और सबसे अहम कदम यह है कि चंदा चोरी में शामिल दाता और दल, दोनों के लिए सजा का प्रावधान कठोर किया जाए। सिर्फ जुर्माने से काम नहीं चलेगा, बल्कि जेल का प्रावधान भी शामिल हो।

यह लड़ाई सिर्फ सरकार की नहीं, बल्कि हम सबकी है। जब तक व्यापारी वर्ग टैक्स बचाने के लिए गलत रास्ता अपनाता रहेगा, तब तक फर्जी दल पैदा होते रहेंगे। हमें समझना होगा कि जो पैसा हम टैक्स के रूप में बचाते हैं, वही पैसा अगर सही हाथों में जाए तो स्कूल, अस्पताल और सड़क बनते हैं, लेकिन अगर फर्जी दलों की जेब में जाए तो वह लोकतंत्र को खोखला करता है। इसलिए हर नागरिक को यह सोचना होगा कि चंदा देना है तो सिर्फ ईमानदार और सक्रिय दल को ही दें और उसकी रसीद की जांच भी करें। सरकार को भी चाहिए कि वह ईमानदार दाताओं को सम्मानित करे, ताकि लोगों में सही रास्ते से दान देने की प्रवृत्ति बढ़े। तभी जाकर यह चंदा मंडी बंद होगी और राजनीति फिर से सेवा का माध्यम बनेगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

करना विकास को मानवीय और स्थानीय बना सकता है।

विश्वरंग के लिए यह महत्वपूर्ण है कि संस्कृति को केवल अतीत की विरासत के रूप में नहीं, बल्कि भविष्य की कल्पना में सक्रिय तत्व के रूप में देखा जाए। प्रश्न यह भी है कि वर्तमान भारत किस प्रकार का विकास चाहता है और उसमें मनुष्य, प्रकृति, समाज तथा सांस्कृतिक विविधता का स्थान क्या होगा।

भारत की सांस्कृतिक एकता को समानता समझना उचित नहीं होगा। उसकी शक्ति इस बात में है कि अनेक भाषाएं, परंपराएं और जीवन-पद्धतियां अपनी विशिष्टता बनाए रखते हुए भी एक-दूसरे से संवाद कर सकती हैं। विश्वरंग का मंच इसी बहुलता को संवाद में बदलने का प्रयास है। इसका उद्देश्य किसी एक सांस्कृतिक रूप को भारतीय संस्कृति का एकमात्र प्रतिनिधि मानना नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृतियों के परस्पर संबंधों को समझने का अवसर तैयार करना है।

अतीत से संवाद, भविष्य की तैयारी: इन सभी आयामों को साथ रखकर एक व्यापक भारत-दृष्टि उभरती है, ऐसी दृष्टि जो अपनी विरासत से परिचित है, लेकिन अतीत में बंद नहीं; जो विविधता को स्वीकार करती है, लेकिन



नालंदा की विरासत का महत्वपूर्ण पक्ष उसका एशियाई विस्तार भी है। ज्ञान और बौद्धिक परंपराओं का प्रभाव दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशिया तक पहुंचा। इसलिए नालंदा से जुड़ा वर्तमान सांस्कृतिक विमर्श स्वाभाविक रूप से भारत से आगे एशिया तक जाता है। इन ऐतिहासिक संपर्कों को आज शिक्षा, संस्कृति, व्यापार और सतत विकास के नए संदर्भों में समझने की आवश्यकता है। **संस्कृति और सतत विकास:** संस्कृति का संबंध केवल विरासत से नहीं, भविष्य से भी है। किसी समाज का सांस्कृतिक ज्ञान उसके प्राकृतिक संसाधनों, पारंपरिक शिल्प, कृषि-प्रवृत्तियों, स्थानीय ज्ञान और सामुदायिक जीवन से जुड़ा होता है। इसलिए सतत विकास की चर्चा में सांस्कृतिक संदर्भों को शामिल

सांस्कृतिक संवाद की नई भारत-दृष्टि

विश्वरंग में विभिन्न भारतीय भाषाओं के रचनाकारों को साथ लाने का उद्देश्य किसी एक भाषा को केंद्र में रखना नहीं, बल्कि भाषाओं के बीच बराबरी का संवाद स्थापित करना है। पूर्वोत्तर भारत की भाषाओं और साहित्य को व्यापक भारतीय विमर्श में स्थान देना भी इसी दृष्टि का हिस्सा है। अनुवाद इस संवाद की आधारभूत संरचना बन सकती है। जब एक भाषा का पाठक दूसरी भाषा के साहित्य से परिचित होता है, तो केवल साहित्य का विस्तार नहीं होता, बल्कि अनुभवों की साझेदारी भी बढ़ती है।

कला और टैगोर : संस्कृति की व्यापक दृष्टि: विश्वरंग में साहित्य को कला से अलग करने नहीं देखा जाता। संगीत, नाटक, चित्रकला, सिनेमा और नृत्य भी संस्कृति की महत्वपूर्ण अभिव्यक्तियां हैं। भारतीय कला-परंपराओं की बहुलता बताती है कि संस्कृति कोई स्थिर वस्तु नहीं है। शास्त्रीय और लोक, परंपरा और आधुनिकता, क्षेत्रीय और वैश्विक अनुभवों के बीच निरंतर संवाद से संस्कृति विकसित होती है। नालंदा भारत और एशिया के ऐतिहासिक सांस्कृतिक संपर्क का प्रतीक है, वहीं टैगोर ने

बल्कि उसकी समकालीन प्रतिध्वनि है।

आज शिक्षा के सामने कृत्रिम बुद्धिमत्ता, तकनीकी परिवर्तन, रोजगार, कोशल, पर्यावरण और सामाजिक असमानता जैसी चुनौतियां हैं। ऐसे समय में नालंदा की स्मृति का अर्थ अतीत को दोहराना नहीं, बल्कि यह विचार करना है कि हमारी वर्तमान ज्ञान-संस्थाएं कितनी खुली, बहुविषयक, संवादशील और समाज से जुड़ी हैं। क्या विश्वविद्यालय भाषा, साहित्य, कला, तकनीक और समाज के बीच नए संवादों के लिए पर्याप्त जगह बना रहे हैं? नालंदा में विश्वरंग का विमर्श इन्हीं प्रश्नों को समकालीन संदर्भ देता है।

भारतीय भाषाएं : विविधता से संवाद तक: विश्वरंग की सांस्कृतिक यात्रा का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य भारतीय भाषाओं और संस्कृतियों को एक-दूसरे के निकट लाना तथा भारत को उसके व्यापक एशियाई संदर्भ में देखना है। भारत की भाषाई विविधता केवल बहुलता का उदाहरण नहीं है। भाषाएं अपने भीतर साहित्य, लोक-स्मृतियां, मिथक, मुहावरे और जीवन-अनुभवों के माध्यम से समाज की विशिष्ट चेतना संजोए हुए हैं। इसलिए भारतीय भाषाओं का प्रश्न केवल संरक्षण का नहीं, सांस्कृतिक आत्मबोध का भी है।